स्त्री-विमर्श के दायरे में सिमटी हिन्दी कहानी

डॉ. इशरत खान

आज का युग महिला सशक्तीकरण का युग है, जब से महिला सशक्तिकरण वर्ष मनाया गया तब से स्त्री विमर्श विषय केन्द्र में आने लगा। यह अपनी अर्थ-सत्ता में बहुत ही गहन है। इसलिए सभी सुधी जन-साहित्यकार पत्रकार, व्यवसायी, कॉरपोरेट कर्मी, इस दिशा में सजग हैं। विज्ञापन दाता, समाजसेवक, कार्यकर्ता, मीडिया तथा फिल्म आदि हर कोई सदियों से पीछे धकेल दी गई शोषित दमित एवं हाशिए पर रही स्त्री को केन्द्र में लाकर उस पर पुनः विचार कर रहे हैं।

वास्तव में 'स्त्री-विमर्श' का सामान्य अर्थ है - स्त्री के सन्दर्भ में चिन्तन-मनन करना एवं उसकी समस्याओं पर विचार करना। स्त्री-विमर्श की सार्थकता और प्रासंगिकता आज और भी बढ़ जाती है। पितृसत्ता से ही दुनिया की आधी आबादी जुड़ी है। पितृक सत्ता ने ही दुनिया की आधी आबादी को अपना उपनिवेश बनाया तथा उन्हें आत्महीन अस्तित्वहीन, एवं वाणीहीन भी किया है। स्त्री-विमर्श ने सदियों से चली आ रही इस खामोशी को तोड़ा है, उसे आवज दी है।

सीमोन द बोउवर, केट मिल्ट, बैटी फरीडन, इरीगिरी तथा दरिदा आदि ने स्त्री-पाठ के प्रश्न को उठाकर विश्वचिन्तन में एक नी बहस को जन्म दिया। पितृक मूल्यों को पहली बार समस्या ग्रस्त ठहराया है।[1] स्त्री-मुक्ति के सबसे बड़े मसीहा "डॉ.राममनोहर लोहिया ने, आज़ादी के बाद, स्त्री-मुक्ति के सवालों पर जिस तरह गहराई से विचार किया है और सबसे पहले नर-नारी की समानता की बात कही थीं।[2]

स्त्री-विमर्श का महत्त्वपूर्ण मुद्दा है - नारी-

मुक्ति। इसके विभिन्न पक्ष है - उनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष आर्थिक मुक्ति का है। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान में नारी को राजनीति में भाग लेने के साथ-साथ आर्थिक स्वतंत्रता भी प्राप्त हुई। आज नारी आत्मनिर्भर होकर आर्थिक क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं। समाज और अर्थक्षेत्रों के सम्बन्धों के कारण नारी के समक्ष विभिन्न मनस्थितियाँ उभरी हैं। जहाँ एक ओर उसमें वैयक्तिक, अस्तित्व-विषयक चेतना ने जन्म लिया है, वहीं दूसरी ओर बाहर के कार्यक्षेत्रों से उत्पन्न नए सम्बन्धों से भी उसे जूझना पड़ा है।

इस सन्दर्भ में 'सूनी' कहानी में कामकाजी स्त्री की मनस्थितियों को इस प्रकार रेखांकित किया गया है -

'सूनी' कहानी की नायिका 'सुनंदा' अपनी नौकरी की व्यस्तता देखकर परेशान हो जाती है। वह इतनी व्यस्त है कि उम्र के ढलने पर उसे अपने जीवन के सुखमय क्षणों का स्मरण हो आता है। रिक्शे में, घर की तरफ जाते-जाते सूनी सोचती है - "आज कौन-सा दिन था मंगल या बुध? कौन-सी तारीख थी, इक्कीस या बाईस? वह अपनी घड़ी देखती है और पाती है कि उस दिन न इक्कीस थी, न बाईस, बल्कि तेईस तारीख थी,दिन था शुक्रवार।"[3]

स्त्री-विमर्श का दूसरा मुद्दा है - स्त्री-चेतना। यह चेतना शहरी और ग्रामीण नारी दोनों में दिखाई देती है। जब तक बिमलाएँ हैं' (चित्रा मुदगल) कहानी नारी-चेतना की ही कहानी है। इस कहानी की नायिका बिमला 'समाचार अपार्टमेन्ट' में घरों में कपड़े धोने, बरतन मांजने तथा झाड़ू-पोछे का काम करती थी। उसका पति (गमकू) रिक्शा चलाता है। एक दिन उसकी बेटी सुरसती पखाने (संडास) को गई थी। जब वह, देर तक लौटकर नहीं आई तब बिमला उसे ढूंढने जाती है। उसकी बच्ची के साथ अनर्थ होता है। वह अपनी बच्ची को लेकर सीधे पुलिस स्टेशन जाना चाहती है।

पति भी पुलिस में शिकायत करने का विरोध करता है किन्तु बिमला किसी की कभी भी नहीं सुनती और पुलिस में शिकायत दर्ज करा देती है - लेकिन उसका कायर पति उसे छोड़कर चला जाता है। लेखिका का कहना है - ("जब भी उससे मिलती हूँ, नयी शक्ति और स्फूर्ति से भर उठती हूँ, सोचती हूँ, समाज में जब तक बिमलाएँ है, औरत को अस्मिता अपने अधिकार से वंचित नहीं रह सकती....न कोई उसे वंचित कर सकता है।")[4]

'बिमला' जैसी माँ जब तक समाज में हैं नारी-मुक्ति अवश्य रहेगी।

बदलते परिवेश में नारी-स्वतंत्रता आज वर्तमान जीवन के चिन्तन को प्रमुख विषय है। आजादी (ममता कालिया) की बूढ़ी दादी स्वतंत्रता के परिपार्श्व को न समझती हों किन्तु अज्ञान के कारण वे अपने पराधीन जीवन को महसूस करना नहीं भूलती। पन्द्रह अगस्त के दिन सुबह-सुबह जलसे में सफेद कपड़े पहनकर स्कूल जानेवाली 'पोती' से कहती हैं -

"री मुन्नी थोड़ी आज़ादी मेरे लिए भी ले आना पुड़िया में बाँध कै।"[5]

इसीलिए स्त्री-पुरूष सम्बन्धों और नैतिकता पर भी प्रश्न चिह्न लग जाता है।

आज नारी के आर्थिक स्वावलम्बन से उत्पन्न घोर व्यक्तिवाद ने बौद्धिकता के नाम पर स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के पारस्पारिक बन्धनों को चुनौती दी है। इन बन्धनों में एक बन्धन दाम्पत्य जीवन से सम्बन्धित हैं। पति-पत्नी के मध्य जब झगड़ा होता है तो उसका बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है.-

बच्चों को ही बहुत कुछ सहना पड़ता है। "वाइफ स्वैपी" कहानी में स्त्री-पुरूष सम्बन्धों का खुला चित्रण किया गयाहैं। प्रस्तुत कहानी में महीने के अन्तिम शनिवार की शाम को क्लब में ड्रिंक,

डांस डिनर पार्टी आयोजित होती है। देर रात तक जश्न चलता है, अंत में एक बड़े बियर के जग में चिल्ड बियर की बोतलें उडेंली जाती हैं, उसमें सभी लोग गाडी की चाभी जग में डालते है। फिर छड़ी से, जो सबसे पहले चाभी डालता है, वह चाभी उठाता है। जिस गाड़ी की चाभी हाथ लगेगी, उस गाड़ी के मालिक की पत्नी रातभर उस पुरूष के साथ रहेगी। अपनी पत्नियों को दूसरे पति को सोंपते, दुसरे से अदला-बदली करते शराब-शबाब का लुफ्ते उठाते हैं। स्त्री पुरूष सम्बन्धों का यह एक नया प्रकार हमारे सामने आता हैं।"[6]

'नैतिकता' मानवजीवनमें आचरण को बतानेवाली समाज की स्वीकृत नियमावली होती है। नैतिकता के कारण मानव, समाज में अच्छा व्यवहार करता है। समय के अनुसार नैतिकता के मूल्यों में परिवर्तन आया है। नवीन नैतिक मानदण्डों के कारण नारी भी अपनी इच्छानुसार जीने लगी। स्वयं को पुरूष की तुलना में अधिक मुक्त और स्वच्छन्दु मानने लगी है। नैतिक बोध में जो नया मानदण्ड आया है, उसका मूल रूप है - प्रेम का बदलता हुआ स्वरूप।

इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में कुछ ऐसी कहानियों से हम रूबरू होते हैं जिसमें नैतिकता का जायजा बदलते परिवेशगत सन्दर्भों में लिया जा सकता है। 'वे' कहानी की 'अरुणा' अपने आदर्श भाई साहब की चिन्ता किये बगैर अपने दोस्त के साथ यात्रा पर निकल पड़ती है और रात में उसी के घर उसके साथ सोतीहै। अकेलियाँ-दुकेलियाँ कहानी की नायिका 'आफशाँ' का परिवार तो दूर गाँव में है। स्वतंत्रता को प्राप्त करने की लालसा में शहर की ओर निष्क्रमण करनेवाली आफशाँ कहानी-नायक हामिद के साथ सम्बन्ध रखती है।"[7]

नैतिकता एवं स्वच्छन्दता के सामने एक प्रश्नचिह्न है। क्या स्त्रीविमर्श का अर्थ नैतिकता का अतिक्रमण है, स्वच्छन्दता ही उसका जीवन लक्ष्य है - यह विचारणीय मुद्दा है।

स्त्री विमर्श का अन्तिम और महत्वपूर्ण मुद्दा है - आज परिवार एवं समाज में स्त्री की स्थिति। साहित्यकारों ने स्त्रियों के पक्ष में खूब लिखा और लिख रहे हैं। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि क्या स्त्रियों के पक्ष में खूब लिखा औरलिख रहे हैं। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि क्या स्त्रियों के जीवन में सुधार आया, क्या वे अपने अधिकारों से परिचित हैं? आज भी अनेक कारणों से स्त्री को बहुत कुछ सहना पड़ता है। चाहे वह ग्रामीण स्त्री हो या शहरी स्त्री। इस दृष्टि से जयश्री राय कुछ अलग तरह की कथा लेखिका हैं।......उनकी 'हव्वा की बेटी','बेटी बेचवा', 'अपनी ओर लौटते हुए' तथा 'माँ' कहानियाँ महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। 'बेटी बेचवा' कहानी में ग्राम्य समाज की बेटियों की तड़प को दिखाया गया है जिसमें अनमेल विवाह की त्रासदी को चित्रित किया गया है। क्या ग्रामीण समाज की स्त्रियों में कोई चेतना या जागृति नहीं आयी है जो अपने पिता समान आयु के पुरूष के साथ बाँध दी जाती है। यह भी पुरूष रूपी पिता का ही एकरूप है जो अपने स्वार्थ के लिए अपनी सुन्दर बेटी को बेच देता है। इसे दुख का संकेत राधे (पिता) के सब्दों में, यत्र-तत्र मिलता है। इस सन्दर्भ में कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं...

1. 'कैसे न कैसे सपने बुन रही होगी बुचिया।'[8]
2. राधे को बचपन की बुचिया याद हो आती है - "जब भी वह घर से निकलता है, दो गोर-गार हाथ उसके फतुहे का कोना पकड़कर खींच लेते हैं - बाबू जी हमका पाज़ेब ला देव और सुनहरी बूटीवाली ओढ़नी, आज उनकी लाड़ली उनसे क्या माँग रही थीं' - एक राजकुमार जैसा दूल्हा।"[9] अपने गले में उठते हुए बगुल को आप्राण घटकते हुए,उसनेपाँव तेज फैर दिए थे।

कहानी के अन्त में बाबुनी अपनी स्थिति को जान जाती है। उसे महसूस होता है कि उसके

पिता ने अपने स्वार्थ के लिए मुझे चन्द रुपयों में बेच दिया। करुणा से परिपूर्ण शब्दों में बबुनी की त्रासदिक स्थिति का ज्ञान होता है - "हे राम जी! तो क्या गाँववाले सही कहते थे। उसके बाबूजी ने पैसों की खातिर उसे एक बुढ्ढे के हाथों बेच दिया।इतने कठकरेज हो सके कि उसे, अपनी संतान को, तराजु में रखकर तौल दिए। बाबूजी तो दूसरों की तरह 'बेटी बेचवा' निकले।"[10]

आज स्त्री, हर क्षेत्र में प्रगति कर रही है। फिर भी लड़की जन्म की उपेक्षा की जाती है। जैसे हीं माँ के गर्भ में लड़की होने का पता चलता है तब उसको समाप्त करने का प्रयास किया जाता है।

आज के तथाकथित शिक्षित माँ-बाप को कुलदीपक के रूप में लड़के की चाहत है। लेकिन वे इस बात को नहीं समझ रहें हैं कि इन कुलदीपकों को जन्म देनेवाली स्त्री ही समाज से गायब होती रहेगी तब कुलदीपकों को कौन जन्म देगा। सरकार ने इसके लिए कानून भी बनाए हैं और इस दिशा में प्रयत्नशील है। आज कानून बनाने के बावजूद भी स्त्री भ्रूण हत्याएँ होती रहती हैं। आज की हिन्दी कहानी, इन चिंताओं से हमें अवगत कराती है। इस दृष्टि से (दादी मां का बटुआ), फाँस (मनीषा कुलश्रेष्ठ) तथा 'हौसले की तरफ' (अंजली काजल) कहानियाँ महत्वपूर्ण कही जा सकती है। -

"हौसले की तरफ" (अंजली काजल) कहानी में नारी के प्रति समाज का यही रवैया दिखाया गया है। इस सन्दर्भ में एक उदाहरण प्रस्तुत है - लेखिका से कमला (पात्र) कहती है - "छोटी भाभी को जब बच्चा हुआ था, उसे कितनी तकलीफ हुई थी? यही नहीं, भाभी को लड़की हुई थी। सिर्फ इसलिए लड्डू नहीं बाँटे गए, खुशी नहीं मनाई गई।"[11]

इसी प्रकार परिवार एवं समाज में लड़का-लड़की में भेद भी किया जाता है। इसी के साथ आज बलात्कार की समस्या भी दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। इस समस्या के समाधान के लिए सरकार को कानून बनाकर कठोर कदम उठाना चाहिए।

आज की सबसे विकराल समस्या है - 'दहेज' की। इसी कारण ससुराल में कितनी बहुएँ जलाई जाती हैं ऐसे समाचार सुनकर दिल दहल जाता है। इस दृष्टि से 'अकेलियाँ दुकेलियाँ' (ममता कालिया) तथा 'लडकियाँ' (अजगर वजाहत) उल्लेखनीय कहानियाँ है। इनमें 'लड़कियाँ' कहानी की जिक्र करना मैं आवश्यक समझती हूँ। इस कहानी में नवविवाहिता 'श्यामा' नामक बहू को, दहेज के लालची ससुराल वाले जला देते है और उसकी लाश स्वयं बोल उठती है। वह पुलिस थाने, अदालत, अखबार के दफ्तर, प्रधानमंत्री के सचिवालय, स्कूल,भट्ट जी, भगवान तथा मानव अधिकार समिति के पास जाकर उनको यथार्थ से अवगत कराती है - कुछ उदाहरण

1. "अखबार के दफ्तर पहुँचकर श्यामा की लाश अपना बयान देती है - "अभी तीन साल पहले ही मेरी शादी हुी थी। मेरे पिता जी ने पूरा दहेज दिया था। लेकिन लालची ससुरालवालों ने दहेज के लिए मुझे जलाकर मार डाला।"[12]

जब श्यामा की लाश भगवान से रू-ब-रू होती है तो दोनों में इस प्रकार संवाद होता है -

"श्यामा ने भगवान से पूछा - सृष्टि के निर्माता आप हैं?

भगवान छाती ठोककर बोले - हाँ मैं ही हूँ।

संसार के सारे काम आप की इच्छा से होते हैं।

- हाँ मेरी इच्छा से होते हैं।

- मुझे आपकी इच्छा से ही जलाकर मारा डाला गया था?

- हाँ मेरी ही इच्छा से जलाकर मार डाला गया था।

- मेरे पति के लिए आपने ऐसी इच्छा क्यों नहीं की थी?

- पति परमेश्वर होते हैं। वे जलते नहीं केवल जलाते हैं।"[13]

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि जब तक परिवार-समाज में लड़के-लड़की में भेद किया जाएगा, स्त्रभ्रूण हत्याएँ होती रहेंगी, दहेज के कारण बहुएँ जलाई जाती रहेंगी, जब तक बलात्कार होते रहेंगे तथा जब तक लड़कियों को बेचा जाएगा, तब तक स्त्रीविमर्श का लक्ष्य एवं सपना पूरा नहीं होगा।

संदर्भ सूची :

1. राकेश कुमार : नारीवादी विमर्श : पृ. 11
2. शैलेन्द्र सागर : कथाक्रम : जुलाई - सितम्बर : 2002 : पृ. 50
3. ममता कालिया : थियेटर रोड के कौवे : 2006 : पृ. 28
4. चित्रामुदगल : लपटें (कहानी संग्रह) : 2005 : पृ. 101
5. ममता कालिया की कहानियाँ : खंड 1 : पृ. 108
6. कल्पना पाटिल : चित्रा मुदगल का कथासाहित्य : पृ. 189
7. ममता कालिया : पच्चीस साल की लड़की : पृ. 123
8. जयश्री राय : तुम्हें छू लूँ जरा : कहानी संग्रह : 2012 :पृ. 131
9. जयश्री राय : तुम्हें छू लूँ जरा : 2012 : पृ. 132
10. वही : पृ. 141
11. राजेन्द्र यादव (सम्पादक) : हंस : मई 2003 : पृ. 77
12. नमिता सिंह (सम्पादिका) : वर्तमान साहित्य : अगस्त 2005 : पृ. 8
13. वही : पृ. 9

* * *